ISSN: 2395-7852

International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management

Volume 10, Issue 3, May 2023

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

Impact Factor: 6.551

+91 9940572462 +91 9940572462 ijarasem@gmail.com www.ijarasem.com

International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 3, May 2023 |

संस्कृत भाषा का वैज्ञानिक स्वरूप

Bhagwan Sahai Sharma

Assistant Professor in Sanskrit, Govt. Shakambhar PG College, Sambhar Lake, Jaipur, Rajasthan, India

सार

संस्कृत भाषा की उच्चारण प्रक्रिया अत्यंत ही वैज्ञानिक है। इसकी वर्णमाला पाणिनी की अष्टाध्यायी तथा उसमें निहित माहेश्वर सूत्रों के माध्यम से व्यवस्थित की गई है। इसमें वर्णों की उच्चारण प्रक्रिया पूर्ण वैज्ञानिक परिप्रेक्ष में सुव्यवस्थित रूप में समाहित है। संस्कृत केवल स्वविकसित भाषा नहीं बल्कि संस्कारित भाषा है। इसीलिए इसका नाम संस्कृत है। ऋग्वेद की भाषा विश्व के भाषाई अध्ययन में प्राचीनतम एवं महत्वपूर्ण स्थान रखती है। स्वयं ऋग्वेद में अनेक स्थलों पर भाषा तत्व के गंभीर सिद्धांत, दार्शनिक चिंतन, भाषा की परिशुद्धता, वैज्ञानिकता तथा सूक्ष्मता को जानना आवश्यक बताया गया है।

परिचय

संस्कृत भाषा का व्याकरण अत्यन्त परिमार्जित एवं वैज्ञानिक है। बहुत प्राचीन काल से ही अनेक व्याकरणाचार्यों ने संस्कृत व्याकरण पर बहुत कुछ लिखा है। किन्तु पाणिनि का संस्कृत व्याकरण पर किया गया कार्य सबसे प्रसिद्ध है। उनका अष्टाध्यायी किसी भी भाषा के व्याकरण का सबसे प्राचीन ग्रन्थ है।[1]

संस्कृत में संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया के कई तरह से शब्द-रूप बनाये जाते हैं, जो व्याकरणिक अर्थ प्रदान करते हैं। अधिकांश शब्द-रूप मूलशब्द के अन्त में प्रत्यय लगाकर बनाये जाते हैं। इस तरह ये कहा जा सकता है कि संस्कृत एक बहिर्मुखी-अन्त-श्लिष्टयोगात्मक भाषा है। संस्कृत के व्याकरण को वागीश शास्त्री ने वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान किया है। कंप्यूटर के लिए संस्कृत को सबसे उपयुक्त भाषा आज के वैज्ञानिकों ने स्वीकार किया है। हिंदी इस भाषा (संस्कृत) की उत्तराधिकारी भाषा है। संस्कृत ने जिन अक्षरों का प्राचीन काल में आविष्कार कर भाषा विज्ञान को विकसित किया उसे हिंदी ने बड़े ही गौरवमयी ढंग से सहेज कर रखा है। अक्षर का अर्थ क्षरण न होने वाले से है। 'दुनिया की सबसे पुरानी भाषा है :- संस्कृत भाषा ।[2]

*संस्कृत में 1700 धातुएं, 70 प्रत्यय और 80 उपसर्ग हैं, इनके योग से जो शब्द बनते हैं, उनकी संख्या 27 लाख 20 हजार होती है। यदि दो शब्दों से बने सामासिक शब्दों को जोड़ते हैं तो उनकी संख्या लगभग 769 करोड़ हो जाती है।[3]

संस्कृत इंडो-यूरोपियन लैंग्वेज की सबसे #प्राचीन_भाषा है और सबसे वैज्ञानिक_भाषा भी है। इसके सकारात्मक तरंगों के कारण ही ज्यादातर श्लोक संस्कृत में हैं। #भारत में संस्कृत से लोगों का जुड़ाव खत्म हो रहा है लेकिन विदेशों में इसके प्रति रुझा◌ान बढ़ रहा है।[4]

ब्रह्मांड में सर्वत्र गति है। गति के होने से ध्वनि प्रकट होती है । ध्वनि से शब्द परिलक्षित होते हैं और शब्दों से भाषा का निर्माण होता है। आज अनेकों भाषायें प्रचलित हैं । किन्तु इनका काल निश्चित है कोई सौ वर्ष, कोई पाँच सौ तो कोई हजार वर्ष पहले जन्मी। साथ ही इन भिन्न भिन्न भाषाओं का जब भी जन्म हुआ, उस समय अन्य भाषाओं का अस्तित्व था। अतः पूर्व से ही भाषा का ज्ञान होने के कारण एक नयी भाषा को जन्म देना अधिक कठिन कार्य नहीं है। किन्तु फिर भी साधारण मनुष्यों द्वारा साधारण रीति से बिना किसी वैज्ञानिक आधार के निर्माण की गयी सभी भाषाओं मे भाषागत दोष दिखते हैं । ये सभी भाषाए पूर्ण शुद्धता,स्पष्टता एवं वैज्ञानिकता की कसौटी पर खरी नहीं उतरती। क्योंकि ये सिर्फ और सिर्फ एक दूसरे की बातों को समझने के साधन मात्र के उद्देश्य से बिना किसी सूक्ष्म वैज्ञानिकीय चिंतन के बनाई गयी। किन्तु मनुष्य उत्पत्ति के आरंभिक काल में, धरती पर किसी भी भाषा का अस्तित्व न था।[5]

...तो सोचिए किस प्रकार भाषा का निर्माण संभव हुआ होगा? शब्दों का आधार #ध्वनि है, तब ध्वनि थी तो स्वाभाविक है #शब्द भी थे। किन्तु व्यक्त नहीं हुये थे, अर्थात उनका ज्ञान नहीं था।[6]

प्राचीन ऋषियों ने मनुष्य जीवन की आत्मिक एवं लौकिक उन्नति व विकास में शब्दो के महत्व और शब्दों की अमरता का गंभीर आकलन किया । उन्होने एकाग्रचित्त हो ध्यानपूर्वक, बार बार मुख से अलग प्रकार की ध्वनियाँ उच्चारित की और ये जानने में प्रयासरत रहे कि मुख-

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 3, May 2023 |

विवर के किस सूक्ष्म अंग से ,कैसे और कहाँ से ध्वनि जन्म ले रही है। तत्पश्चात निरंतर अथक प्रयासों के फलस्वरूप उन्होने परिपूर्ण, पूर्ण शुद्ध,स्पष्ट एवं अनुनाद क्षमता से युक्त ध्वनियों को ही भाषा के रूप में चुना ।[7]

सूर्य के एक ओर से 9 रश्मियाँ निकलती हैं और सूर्य के चारो ओर से 9 भिन्न भिन्न रश्मियों के निकलने से कुल निकली 36 रश्मियों की ध्वनियों पर *संस्कृत के 36 #स्वर बने और इन 36 रश्मियो के पृथ्वी के आठ वसुओ से टकराने से 72 प्रकार की #ध्वनि उत्पन्न होती हैं । जिनसे संस्कृत के 72 व्यंजन बने*। इस प्रकार ब्रह्माण्ड से निकलने वाली कुल *108 ध्वनियों पर संस्कृत की #वर्णमाला आधारित है*। ब्रह्मांड की इन ध्वनियों के रहस्य का ज्ञान वेदों से मिलता है। इन ध्वनियों को नासा ने भी स्वीकार किया है जिससे स्पष्ट हो जाता है कि प्राचीन ऋषि मुनियों को उन ध्वनियों का ज्ञान था और उन्ही ध्वनियों के आधार पर उन्होने पूर्णशुद्ध भाषा को अभिव्यक्त किया। *अतः प्राचीनतम #आर्यभाषा जो #ब्रह्मांडीय_संगीत थी उसका नाम "संस्कृत" पड़ा*। संस्कृत – संस् + कृत् अर्थात #श्वासों_से_निर्मित अथवा साँसो से बनी एवं स्वयं से कृत , जो कि ऋषियों के ध्यान लगाने व परस्पर संपर्क से अभिव्यक्त हुयी*।[8]

कालांतर में #पाणिनी ने नियमित #व्याकरण के द्वारा संस्कृत को परिष्कृत एवं सर्वम्य प्रयोग में आने योग्य रूप प्रदान किया। #पाणिनीय_व्याकरण ही संस्कृत का प्राचीनतम व सर्वश्रेष्ठ व्याकरण है*। दिव्य व दैवीय गुणों से युक्त, अतिपरिष्कृत, परमार्जित, सर्वाधिक व्यवस्थित, अलंकृत सौन्दर्य से युक्त , पूर्ण समृद्ध व सम्पन्न , पूर्णवैज्ञानिक #देववाणी *संस्कृत – मनुष्य की आत्मचेतना को जागृत करने वाली, सात्विकता में वृद्धि , बुद्धि व आत्मबलप्रदान करने वाली सम्पूर्ण विश्व की सर्वश्रेष्ठ भाषा है*। अन्य सभी भाषाओ में त्रुटि होती है पर इस भाषा में कोई त्रुटि नहीं है। इसके उच्चारण की शुद्धता को इतना सुरक्षित रखा गया कि सहस्त्रों वर्षो से लेकर आज तक वैदिक मन्त्रों की ध्वनियों व मात्राओं में कोई पाठभेद नहीं हुआ और ऐसा सिर्फ हम ही नहीं कह रहे बल्कि विश्व के आधुनिक विद्वानों और भाषाविदों ने भी एक स्वर में संस्कृत को पूर्णवैज्ञानिक एवं सर्वश्रेष्ठ माना है।[9]

संस्कृत की सर्वोत्तम शब्द-विन्यास युक्ति के, गणित के, कंप्यूटर आदि के स्तर पर नासा व अन्य वैज्ञानिक व भाषाविद संस्थाओं ने भी इस भाषा को एकमात्र वैज्ञानिक भाषा मानते हुये इसका अध्ययन आरंभ कराया है* और भविष्य में भाषा-क्रांति के माध्यम से आने वाला समय संस्कृत का बताया है। अतः अंग्रेजी बोलने में बड़ा गौरव अनुभव करने वाले, अंग्रेजी में गिटपिट करके गुब्बारे की तरह फूल जाने वाले कुछ महाशय जो संस्कृत में दोष गिनाते हैं उन्हें कुँए से निकलकर संस्कृत की वैज्ञानिकता का एवं संस्कृत के विषय में विश्व के सभी विद्वानों का मत जानना चाहिए।
*नासा की वेबसाईट पर जाकर संस्कृत का महत्व पढ़ें।[10]

शर्म की बात है कि भारत की भूमि पर ऐसे लोग हैं जिन्हें अमृतमयी वाणी संस्कृत में दोष और विदेशी भाषाओं में गुण ही गुण नजर आते हैं वो भी तब जब विदेशी भाषा वाले संस्कृत को सर्वश्रेष्ठ मान रहे हैं* ।

अतः जब हम अपने बच्चों को कई विषय पढ़ा सकते हैं तो संस्कृत पढ़ाने में संकोच नहीं करना चाहिए। देश विदेश में हुये कई शोधों के अनुसार संस्कृत मस्तिष्क को काफी तीव्र करती है जिससे अन्य भाषाओं व विषयों को समझने में काफी सरलता होती है , साथ ही यह सत्वगुण में वृद्धि करते हुये नैतिक बल व चरित्र को भी सात्विक बनाती है। अतः सभी को यथायोग्य संस्कृत का अध्ययन करना चाहिए।[11]

संस्कृत भाषा का महत्व :
संस्कृत भाषा के विभिन्न स्वरों एवं व्यंजनों के विशिष्ट उच्चारण स्थान होने के साथ प्रत्येक स्वर एवं व्यंजन का उच्चारण व्यक्ति के सात ऊर्जा चक्रों में से एक या एक से अधिक चक्रों को निम्न प्रकार से प्रभावित करके उन्हें क्रियाशील – उर्जीकृत करता है :-

मूलाधार चक्र – स्वर 'अ' एवं क वर्ग का उच्चारण मूलाधार चक्र पर प्रभाव डाल कर उसे क्रियाशील एवं सक्रिय करता है।
स्वर 'इ' तथा च वर्ग का उच्चारण स्वाधिष्ठान चक्र को उर्जीकृत करता है।
स्वर 'ऋ' तथा ट वर्ग का उच्चारण मणिपूरक चक्र को सक्रिय एवं उर्जीकृत करता है।
स्वर 'ऌ' तथा त वर्ग का उच्चारण अनाहत चक्र को प्रभावित करके उसे उर्जीकृत एवं सक्रिय करता है।
स्वर 'उ' तथा प वर्ग का उच्चारण विशुद्धि चक्र को प्रभावित करके उसे सक्रिय करता है।
ईषत् स्पृष्ट वर्ग का उच्चारण मुख्य रूप से आज्ञा चक्र एवं अन्य चक्रों को सक्रियता प्रदान करता है।
ईषत् विवृत वर्ग का उच्चारण मुख्य रूप से[12]

सहस्त्राधार चक्र एवं अन्य चक्रों को सक्रिय करता है।
इस प्रकार देवनागरी लिपि के प्रत्येक स्वर एवं व्यंजन का उच्चारण व्यक्ति के किसी न किसी उर्जा चक्र को सक्रिय करके व्यक्ति की चेतना के स्तर में अभिवृद्धि करता है। वस्तुतः *संस्कृत भाषा का प्रत्येक शब्द इस प्रकार से संरचित (design) किया गया है कि उसके

स्वर एवं व्यंजनों के मिश्रण (combination) का उच्चारण करने पर वह हमारे विशिष्ट ऊर्जा चक्रों को प्रभावित करे*। प्रत्येक शब्द स्वर एवं व्यंजनों की विशिष्ट संरचना है जिसका प्रभाव व्यक्ति की चेतना पर स्पष्ट परिलक्षित होता है। इसीलिये कहा गया है कि व्यक्ति को शुद्ध उच्चारण के साथ-साथ बहुत सोच-समझ कर बोलना चाहिए। शब्दों में शक्ति होती है जिसका दुरूपयोग एवं सदुपयोग स्वयं पर एवं दूसरे पर प्रभाव डालता है। शब्दों के प्रयोग से ही व्यक्ति का स्वभाव, आचरण, व्यवहार एवं व्यक्तित्व निर्धारित होता है।

उदाहरणार्थ जब 'राम' शब्द का उच्चारण किया जाता है है तो हमारा अनाहत चक्र जिसे हृदय चक्र भी कहते है सक्रिय होकर उर्जीकृत होता है। 'कृष्ण' का उच्चारण मणिपूरक चक्र – नाभि चक्र को सक्रिय करता है। 'सोह्म' का उच्चारण दोनों 'अनाहत' एवं 'मणिपूरक' चक्रों को सक्रिय करता है।[13]

वैदिक मंत्रो को हमारे मनीषियों ने इसी आधार पर विकसित किया है। प्रत्येक मन्त्र स्वर एवं व्यंजनों की एक विशिष्ट संरचना है। इनका निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार शुद्ध उच्चारण ऊर्जा चक्रों को सक्रिय करने के साथ साथ मष्तिष्क की चेतना को उच्चीकृत करता है। उच्चीकृत चेतना के साथ व्यक्ति विशिष्टता प्राप्त कर लेता है और उसका कहा हुआ अटल होने के साथ-साथ अवश्यम्भावी होता है। शायद आशीर्वाद एवं श्राप देने का आधार भी यही है। संस्कृत भाषा की वैज्ञानिकता एवं सार्थकता इस तरह स्वयं सिद्ध है।

भारतीय शास्त्रीय संगीत के सातों स्वर हमारे शरीर के सातों उर्जा चक्रों से जुड़े हुए हैं । प्रत्येक का उच्चारण सम्बंधित उर्जा चक्र को क्रियाशील करता है। शास्त्रीय राग इस प्रकार से विकसित किये गए हैं जिससे उनका उच्चारण / गायन विशिष्ट उर्जा चक्रों को सक्रिय करके चेतना के स्तर को उच्चीकृत करे। प्रत्येक राग मनुष्य की चेतना को विशिष्ट प्रकार से उच्चीकृत करने का सूत्र (formula) है। इनका सही अभ्यास व्यक्ति को असीमित ऊर्जावान बना देता है।[14]

संस्कृत केवल स्वविकसित भाषा नहीं बल्कि संस्कारित भाषा है इसीलिए इसका नाम संस्कृत है। संस्कृत को संस्कारित करने वाले भी कोई साधारण भाषाविद् नहीं बल्कि #महर्षि_पाणिनि; #महर्षि_कात्यायिनि और योग शास्त्र के प्रणेता महर्षि #पतंजलि हैं। इन तीनों महर्षियों ने बड़ी ही कुशलता से योग की क्रियाओं को भाषा में समाविष्ट किया है। यही इस भाषा का रहस्य है । जिस प्रकार साधारण पकी हुई दाल को शुध्द घी में जीरा; मैथी; लहसुन; और हींग का तड़का लगाया जाता है;तो उसे संस्कारित दाल कहते हैं। घी ; जीरा; लहसुन, मैथी ; हींग आदि सभी महत्वपूर्ण औषधियाँ हैं। ये शरीर के तमाम विकारों को दूर करके पाचन संस्थान को दुरुस्त करती है।दाल खाने वाले व्यक्ति को यह पता ही नहीं चलता कि वह कोई कटु औषधि भी खा रहा है; और अनायास ही आनन्द के साथ दाल खाते-खाते इन औषधियों का लाभ ले लेता है। ठीक यही बात संस्कारित भाषा संस्कृत के साथ सटीक बैठती है। जो भेद साधारण दाल और संस्कारित दाल में होता है ;वैसा ही भेद अन्य भाषाओं और संस्कृत भाषा के बीच है।[15]

संस्कृत भाषा में वे औषधीय तत्व क्या है ?
यह विश्व की तमाम भाषाओं से संस्कृत भाषा का तुलनात्मक अध्ययन करने से स्पष्ट हो जाता है। चार महत्वपूर्ण विशेषताएँ:- 1. अनुस्वार (अं) और विसर्ग (अ:): संस्कृत भाषा की सबसे महत्वपूर्ण और लाभदायक व्यवस्था है, अनुस्वार और विसर्ग। पुल्लिंग के अधिकांश शब्द विसर्गान्त होते हैं -यथा- राम: बालक: हरि: भानु: आदि। नपुंसक लिंग के अधिकांश शब्द अनुस्वारान्त होते हैं-यथा- जलं वनं फलं पुष्पं आदि।[16]

विसर्ग का उच्चारण और कपालभाति प्राणायाम दोनों में श्वास को बाहर फेंका जाता है। अर्थात् जितनी बार विसर्ग का उच्चारण करेंगे उतनी बार कपालभाति प्रणायाम अनायास ही हो जाता है। जो लाभ कपालभाति प्रणायाम से होते हैं, वे केवल संस्कृत के विसर्ग उच्चारण से प्राप्त हो जाते हैं।उसी प्रकार अनुस्वार का उच्चारण और भ्रामरी प्राणायाम एक ही क्रिया है । भ्रामरी प्राणायाम में श्वास को नासिका के द्वारा छोड़ते हुए भवरे की तरह गुंजन करना होता है और अनुस्वार के उच्चारण में भी यही क्रिया होती है। अत: जितनी बार अनुस्वार का उच्चारण होगा , उतनी बार भ्रामरी प्राणायाम स्वत: हो जायेगा । जैसे हिन्दी का एक वाक्य लें- " राम फल खाता है"इसको संस्कृत में बोला जायेगा- " राम: फलं खादति"=राम फल खाता है ,यह कहने से काम तो चल जायेगा ,किन्तु राम: फलं खादति कहने से अनुस्वार और विसर्ग रूपी दो प्राणायाम हो रहे हैं। यही संस्कृत भाषा का रहस्य है। संस्कृत भाषा में एक भी वाक्य ऐसा नहीं होता जिसमें अनुस्वार और विसर्ग न हों। अत: कहा जा सकता है कि संस्कृत बोलना अर्थात् चलते फिरते योग साधना करना होता है ।

2.शब्द-रूप:-संस्कृत की दूसरी विशेषता है शब्द रूप। *विश्व की सभी भाषाओं में एक शब्द का एक ही रूप होता है,जबकि संस्कृत में प्रत्येक शब्द के 25 रूप होते हैं*। जैसे राम शब्द के निम्नानुसार 25 रूप बनते हैं- यथा:- रम् (मूल धातु)-राम: रामौ रामा:;रामं रामौ रामान् ;रामेण रामाभ्यां रामै:; रामाय रामाभ्यां रामेभ्य: ;रामात् रामाभ्यां रामेभ्य:; रामस्य रामयो: रामाणां; रामे रामयो: रामेषु ;हे राम ! हे रामौ ! हे रामा : ।ये 25 रूप सांख्य दर्शन के 25 तत्वों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

जिस प्रकार पच्चीस तत्वों के ज्ञान से समस्त सृष्टि का ज्ञान प्राप्त हो जाता है, वैसे ही संस्कृत के पच्चीस रूपों का प्रयोग करने से आत्म साक्षात्कार हो जाता है और इन *25 तत्वों की शक्तियाँ संस्कृतज्ञ को प्राप्त होने लगती है। सांख्य दर्शन के 25 तत्व निम्नानुसार हैं -आत्मा (पुरुष), (अंत:करण 4) मन बुद्धि चित्त अहंकार, (ज्ञानेन्द्रियाँ 5) नासिका जिह्वा नेत्र त्वचा कर्ण, (कर्मेन्द्रियाँ 5) पाद हस्त उपस्थ पायु वाक्, (तन्मात्रायें 5) गन्ध रस रूप स्पर्श शब्द,(महाभूत 5) पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश।*[17]

3.द्विवचन:- *संस्कृत भाषा की तीसरी विशेषता है द्विवचन*। सभी भाषाओं में एक वचन और बहुवचन होते हैं जबकि संस्कृत में द्विवचन अतिरिक्त होता है। इस द्विवचन पर ध्यान दें तो पायेंगे कि यह द्विवचन बहुत ही उपयोगी और लाभप्रद है। जैसे :- राम शब्द के द्विवचन में निम्न रूप बनते हैं:- रामौ , रामाभ्यां और रामयो:। इन तीनों शब्दों के उच्चारण करने से योग के क्रमश: मूलबन्ध ,उड्डियान बन्ध और जालन्धर बन्ध लगते हैं, जो योग की बहुत ही महत्वपूर्ण क्रियायें हैं।

4. सन्धि:- *संस्कृत भाषा की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है सन्धि*। संस्कृत में जब दो शब्द पास में आते हैं तो वहाँ सन्धि होने से स्वरूप और उच्चारण बदल जाता है। उस बदले हुए उच्चारण में जिह्वा आदि को कुछ विशेष प्रयत्न करना पड़ता है।ऐसे सभी प्रयत्न एक्यूप्रेशर चिकित्सा पद्धति के प्रयोग हैं।"इति अहं जानामि" इस वाक्य को चार प्रकार से बोला जा सकता है, और हर प्रकार के उच्चारण में वाक् इन्द्रिय को विशेष प्रयत्न करना होता है।

यथा:- 1 इत्यहं जानामि। 2 अहमिति जानामि। 3 जानाम्यहमिति । 4 जानामीत्यहम्। इन सभी उच्चारणों में विशेष आभ्यंतर प्रयत्न होने से एक्यूप्रेशर चिकित्सा पद्धति का सीधा प्रयोग अनायास ही हो जाता है। जिसके फल स्वरूप मन बुद्धि सहित समस्त शरीर पूर्ण स्वस्थ एवं निरोग हो जाता है। इन समस्त तथ्यों से सिद्ध होता है कि संस्कृत भाषा केवल विचारों के आदान-प्रदान की भाषा ही नहीं ,अपितु मनुष्य के सम्पूर्ण विकास की कुंजी है। यह वह भाषा है, जिसके उच्चारण करने मात्र से व्यक्ति का कल्याण हो सकता है। इसीलिए इसे #देवभाषा और अमृतवाणी कहते हैं। संस्कृत भाषा का व्याकरण अत्यंत परिमार्जित एवं वैज्ञानिक है।[18]

संस्कृत के एक वैज्ञानिक भाषा होने का पता उसके किसी वस्तु को संबोधन करने वाले शब्दों से भी पता चलता है। इसका हर शब्द उस वस्तु के बारे में, जिसका नाम रखा गया है, के सामान्य लक्षण और गुण को प्रकट करता है। ऐसा अन्य भाषाओं में बहुत कम है। पदार्थों के नामकरण ऋषियों ने वेदों से किया है और वेदों में यौगिक शब्द हैं और हर शब्द गुण आधारित हैं । इस कारण संस्कृत में वस्तुओं के नाम उसका गुण आदि प्रकट करते हैं। जैसे हृदय शब्द। हृदय को अंगेजी में हार्ट कहते हैं और संस्कृत में हृदय कहते हैं।

अंग्रेजी वाला शब्द इसके लक्षण प्रकट नहीं कर रहा, लेकिन *संस्कृत शब्द* इसके लक्षण को प्रकट कर इसे परिभाषित करता है। *बृहदारण्यकोपनिषद 5.3.1 में हृदय शब्द का अक्षरार्थ* इस प्रकार किया है- तदेतत् र्त्यक्षर हृदयमिति, ह इत्येकमक्षरमभिहरित, द इत्येकमक्षर ददाति, य इत्येकमक्षरमिति।
अर्थात हृदय शब्द ह, हरणे द दाने तथा इण् गतौ इन तीन धातुओं से निष्पन्न होता है। ह से हरित अर्थात शिराओं से अशुद्ध रक्त लेता है, द से ददाति अर्थात शुद्ध करने के लिए फेफड़ों को देता है और य से याति अर्थात सारे शरीर में रक्त को गति प्रदान करता है। इस सिद्धांत की *खोज हार्वे ने 1922 में की थी,* जिसे *हृदय शब्द* स्वयं *लाखों वर्षों* से उजागर कर रहा था ।[19]

संस्कृत में संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया के कई तरह से शब्द रूप बनाए जाते, जो उन्हें व्याकरणीय अर्थ प्रदान करते हैं। अधिकांश शब्द-रूप मूल शब्द के अंत में प्रत्यय लगाकर बनाए जाते हैं। इस तरह यह कहा जा सकता है कि संस्कृत एक बहिर्मुखी-अंतःश्लिष्टयोगात्मक भाषा है। *संस्कृत के व्याकरण को महापुरुषों ने वैज्ञानिक* स्वरूप प्रदान किया है। संस्कृत भारत की कई लिपियों में लिखी जाती रही है, लेकिन आधुनिक युग में देवनागरी लिपि के साथ इसका विशेष संबंध है। #देवनागरी_लिपि वास्तव में संस्कृत के लिए ही बनी है! इसलिए इसमें *हरेक चिन्ह* के लिए *एक और केवल एक ही ध्वनि है।*

देवनागरी में 13 स्वर और 34 व्यंजन हैं*। **संस्कृत* केवल स्वविकसित भाषा नहीं, बल्कि *संस्कारित भाषा* भी है, अतः *इसका नाम संस्कृत* है। केवल संस्कृत ही एकमात्र भाषा है, जिसका नामकरण उसके बोलने वालों के नाम पर नहीं किया गया है। *संस्कृत को संस्कारित* करने वाले भी कोई साधारण भाषाविद नहीं, बल्कि *महर्षि पाणिनि, महर्षि कात्यायन और योगशास्त्र के प्रणेता महर्षि पतंजलि हैं।[20]

विश्व की सभी भाषाओं में एक शब्द का प्रायः एक ही रूप होता है, जबकि संस्कृत में प्रत्येक शब्द के 27 रूप होते हैं। सभी भाषाओं में एकवचन और बहुवचन होते हैं, जबकि संस्कृत में द्विवचन अतिरिक्त होता है। संस्कृत भाषा की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता है संधि।

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 3, May 2023 |

संस्कृत में जब दो अक्षर निकट आते हैं, तो वहां संधि होने से स्वरूप और उच्चारण बदल जाता है। *इसे शोध में कम्प्यूटर अर्थात कृत्रिम बुद्धि* के लिए सबसे *उपयुक्त भाषा सिद्ध हुई है* और यह भी पाया गया है कि *संस्कृत पढ़ने से स्मरण शक्ति बढ़ती है।*

संस्कृत ही एक मात्र साधन है, जो क्रमशः अंगुलियों एवं जीभ को लचीला बनाती है। इसके अध्ययन करने वाले छात्रों को गणित, विज्ञान एवं अन्य भाषाएं ग्रहण करने में सहायता मिलती है। वैदिक ग्रंथों की बात छोड़ भी दी जाए, तो भी संस्कृत भाषा में साहित्य की रचना कम से कम छह हजार वर्षों से निरंतर होती आ रही है। *संस्कृत केवल एक भाषा* मात्र नहीं है, अपितु एक विचार भी है। *संस्कृत एक भाषा मात्र नहीं, बल्कि एक संस्कृति है और संस्कार भी है।* संस्कृत में विश्व का कल्याण है, शांति है, सहयोग है और *वसुधैव कुटुंबकम्* की भावना भी ![21]

विचार-विमर्श

संस्कृत भाषा और साहित्य विश्व की समस्त प्राचीन भाषाओं और उनके साहित्य (वाङ्मय) में संस्कृत का अपना विशिष्ट महत्व है। यह महत्व अनेक कारणों और दृष्टियों से है। भारत के सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, धार्मिक, अध्यात्मिक, दर्शनिक, सामाजिक और राजनीतिक जीवन एवं विकास के सोपानों की संपूर्ण व्याख्यासंस्कृत वाङ्मय के माध्यम से आज उपलब्ध है। सहस्राब्दियों से इस भाषा और इसके वाङ्मय को - भारत में सर्वाधिक प्रतिष्ठा प्राप्त रही है। भारती की यह सांस्कृतिक भाषा रही है। सहस्राब्दियों तक समग्र भारत को सांस्कृतिक और भावात्मक एकता में आबद्ध रखने को इस भाषा ने महत्वपूर्ण कार्य किया है। इसी कारण भारतीय मनीषा ने इस भाषा को अमरभाषा या देववाणी के नाम से सम्मानित किया है। ऋग्वेदकाल से लेकर आज तक इस भाषा के माध्यम से तभी प्रकार के वाङ्मय का निर्माण होता आ रहा है। हिमालय से लेकर कन्याकुमारी के छोर तक किसी न किसी रूप में संस्कृत का अध्ययन अध्यापन अब तक होता चल रहा है। भारतीय संस्कृति और विचारधारा का माध्यम होकर भी यह भाषा - अनेक दृष्टियों से - धर्मनिरपेक्ष (सेक्यूलर) रही है। धार्मिक, साहित्यिक, आध्यात्मिक, दार्शनिक, वैज्ञानिक और मानविकी (ह्यूमैनिटी) आदि प्राय: समस्त प्रकार के वाङ्मय की रचना इस भाषा में हुई।[22]

ऋग्वेदसंहिता के कतिपय मंडलों की भाषा संस्कृतवाणी का सर्वप्राचीन उपलब्ध स्वरूप है। ऋग्वेदसंहिता इस भाषा का पुरातनतम ग्रंथ है। यहाँ यह भी स्मरण रखना चाहिए कि ऋग्वेदसंहिता केवल संस्कृतभाषा का प्राचीनतम ग्रंथ नहीं है - अपितु वह आर्य जाति की संपूर्ण ग्रंथराशि में भी प्राचीनतम ग्रंथ है। दूसरे शब्दों में, समस्त विश्ववाङ्मय का वह (ऋक्संहिता) सबसे पुरातन उपलब्ध ग्रंथ है। दस मंडलो के इस ग्रंथ का द्वितीय से सप्तम मंडल तक का अंश प्राचीनतम और प्रथम तथा दशम मंडल अपेक्षाकृत अर्वाचीन है। ऋग्वेदकाल से लेकर आज तक उस भाषा की अखंड और अविच्छिन्न परंपरा चली आ रही है। ऋक्संहिता केवल भारतीय वाङ्मय की ही अमूल्य निधि नहीं है - वह समग्र आर्यजाति की, समस्त विश्ववाङ्मय की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विरासत है।[23]

विश्व की प्राचीन प्रागैतिहासिक संस्कृतियों को जो अध्ययन हुआ है, उसमें कदाचित् आर्यजाति से संबद्ध अनुशीलन का विशिष्ट स्थान है। इस वैशिष्ट्य का कारण यही ऋग्वेदसंहिता है। आर्यजाति की आद्यतम निवासभूमि, उनकी संस्कृति, सभ्यता, सामाजिक जीवन आदि के विषय में अनुशीलन हुए हैं ऋक्संहिता उन सबका सर्वाधिक महत्वपूर्ण और प्रामाणिक स्रोत रहा है। पश्चिम के विद्वानों ने संस्कृत भाषा और ऋक्संहिता से परिचय पाने के कारण हो तुलनात्मक भाषाविज्ञान के अध्ययन को सही दिशा दी तथा आर्यभाषाओं के भाषाशास्त्रीय विवेचन में प्रौढ़ि एवं शास्त्रीयता का विकास हुआ। भारत के वैदिक ऋषियों और विद्वानों ने अपने वैदिक वाङ्मय को मौखिक और श्रुतिपरंपरा द्वारा प्राचीनतम रूप में अत्यंत सावधानी के साथ सुरक्षित और अधिकृत अनाए रखा। किसी प्रकार के ध्वनिपरक, मात्रापरक यहाँ तक कि स्वर (ऐक्सेंट) परक परिवर्तन से पूर्णत: बचाते रहने का नि:स्वार्थ भाव में वैदिक वेदपाठी सहस्राब्दियों तक अथक प्रयास करते रहे। 'वेद' शब्द से मंत्रभाग (संहिताभाग) और 'ब्राह्मण' का बोध माना जाता था। 'ब्राह्मण' भाग के तीन अंश - (1) ब्राह्मण, (2) आरण्यक और (3) उपनिषद् कहे गए हैं। लिपिकला के विकास से पर्व मौखिक परंपरा द्वारा वेदपाठियों ने इनका संरक्षण किया। बहुत सा वैदिक वाङ्मय धीरे-धीरे लुप्त हो गया है। पर आज भी जितना उपलब्ध है उसका महत्व असीम है। भारतीय दृष्टि से वेद को अपौरुषेय माना गया है। कहा जाता है, मंत्रद्रष्टा ऋषियों ने मंत्रों का साक्षात्कार किया। आधुनिक जगत् इसे स्वीकार नहीं करता। फिर भी यह माना जाता है कि वेदन्यास ने वैदिक मंत्रों का संकलन करते हुए संहिताओं के रूप में उन्हें प्रतिष्ठित किया। अत: संपूर्ण भारतीय संस्कृति वेदव्यास की युग-युग तक ऋणी बनी रहेगी।[24]

संस्कृत भाषा - ऋक्संहिता की भाषा को संस्कृत का आद्यतम उपलब्ध रूप कहा जा सकता है। यह भी माना जाता है कि उक्त संहिता के प्रथम और दशम मंडलों की भाषा प्राचीनतर है। कुछ विद्वान् प्राचीन वैदिक भाषा को परवर्ती पाणिनीय (लौकिक) संस्कृत से भिन्न मानते हैं। पर यह पक्ष भ्रमपूर्ण है। वैदिक भाषा अभ्रांत रूप ससे संस्कृत भाषा का आद्य उपलब्ध रूप है। पाणिनि ने जिस संस्कृत भाषा का व्याकरण लिखा है उसके दो अंश हैं - (1) वैदिक भाषा (जिसे अष्टाव्यायी में 'छंदप्' कहा गया है) और (2) भाषा (जिसे लोकभाषा या लौकिक भाषा के रूप में रखा गया है)। 'व्याकरण महाभाष्य' नाम से प्रसिद्ध आचार्य पतंजलि के शब्दानुशासन में भी वैदिक भाषा और लौकिक भाषा के शब्दों का आरंभ में उल्लेख हुआ है। 'संस्कृत नाम दैवी वागन्वाख्याता महर्षिभि:' के द्वारा जिसे देवभाषा या संस्कृत

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 3, May 2023 |

कहा गया है उसे संभवत: यास्क, पाणिनि, कात्यायन और पंतजलि के समय तक छंदोभाषा (वैदिक भाषा) और लोकभाषा के दो नामों, स्तरों और रूपों द्वारा व्यक्त किया गया था। बहुत से विद्वानों का मत है कि भाषा के लिए 'संस्कृत' का प्रयोग सर्वप्रथ वाल्मीकि रामायण के सुंदरकांड (30 सर्ग) में हनुमन् द्वारा विशेषणरूप से (संस्कृता वाक्) किया गया है। भारतीय परंपरा की किंवदंती के अनुसार संस्कृत भाषा पहले अव्याकृत थी, उसके प्रकृति, प्रत्ययादि का विश्लिष्ट विवेचन नहीं हुआ था। देवों द्वारा प्रार्थना करने पर देवराज इंद्र ने प्रकृति, प्रत्ययादि का विशिलष्ट विवेचन नहीं हुआ था। देवों द्वारा प्रार्थना कने पर देवराज इंद्र ने प्रकृति, प्रत्यय आदि के विश्लेषण विवेचन का उपायात्मक विधान प्रस्तुत किया। इसी 'संस्कार' विधान के कारण भारत की प्राचीनतम आर्यभाषा का नाम 'संस्कृत' पड़ा। ऋक्संहिताकालीन साधुभाषा तथा 'ब्राह्मण', 'आरण्यक' और 'दशोपनिषद्' की साहित्यिक वैदिक भाषा के अनंतर उसी का विकसित स्वरूप लौकिक संस्कृत' या 'पाणिनीय संस्कृत' हुआ। इसे ही 'संस्कृत' या संस्कृत भाषा (साहित्यिक संस्कृत भी) कहा गया। पर आज के कुछ भाषाविद् संस्कृत को संस्कार द्वारा बनाई गई कृत्रिम भाषा मानते हैं। ऐसा मानते हैं कि इन संस्कृत का मूलाधार पूर्वतर काल को उदीच्य, मध्यदेशीय या आर्यावर्तीय विभाषाएँ थीं। 'विभाषा' या 'उदीचाम्' शब्द से पाणिनिसूत्रों में इनका उल्लेख उपलब्ध है। इनके अतिरिक्त भी 'प्राच्य' आदि बोलियाँ थीं। परंतु 'पाणिनि' ने भाषा का एक सार्वदेशिक और सर्वभारतीय परिष्कृत रूप स्थिर कर दिया। धीरे धीरे पाणिनिसंमत भाषा का प्रयोगरूप और विकास प्राय: स्थायी हो गया। पतंजलि के समय तक 'आर्यावर्त' (आर्यनिवास) के शिष्ट जनों में संस्कृत बोलचाल की भाषा थी। [प्रागादर्शात्प्रत्यक्कालकवनाद्दक्षिणेन हिमवंतमुत्तरेण वारियात्रमेतस्मिन्नार्यावर्ते आर्यानिवासे..... (महाभाष्य, 6।3।109)] पर शीघ्र ही वह समग्र भारत के द्विजातिवर्ग और विद्वत्समाज की सांस्कृतिक और आकर भाषा हो गई।[25]

संस्कृत भाषा के विकासस्तरों की दृष्टि से अनेक विद्वानों ने अनेक रूप स इसका ऐतिहासि कालविभाजन किया है। सामान्य सुविधा की दृष्टि से अधिक मान्य निम्नांकित कालविभाजन दिया जा रहा है - (1) (आदिकाल) वेदसंहिताओं और वाङ्मय का काल - ई. पू. 4500 से 800 ई. पू. तक। (2) (मध्यकाल) ई. पू. 800 से 800 ई. तक जिसमें शास्त्रों दर्शनसूत्रों, वेदांग ग्रंथों, काव्यों तथा कुछ प्रमुख साहित्यशास्त्रीय ग्रंथों का निर्माण हुआ, (3) (परवर्तीकाल) 800 ई. से लेकर 1600 ई. या अब तक का आधुनिक काल-जिस युग में काव्य, नाटक, साहित्यशास्त्र, तंत्रशास्त्र, शिल्पशास्त्र आदि के ग्रंथों की रचना के साथ साथ मूल ग्रंथों की व्याख्यात्मक, कृतियों की महत्वपूर्ण सर्जना हुई। भाष्य, टीका, विवरण, व्याख्यान आदि के रूप में जिन सहस्रों ग्रंथों का निर्माण हुआ उनमें अनेक भाष्य और टीकाओं की प्रतिष्ठा, मान्यता, और प्रसिद्धि मूलग्रंथों से भी कहीं-कहीं अधिक हुई। इस प्रकार कहा जा सकता है। कि आधुनिक विद्वानों के अनुसार भी संस्कृत भाषा का अखंड प्रवाह पाँच सहस्र वर्षों से बहता चला आ रहा है। भारत में यह आर्यभाषा का सर्वाधिक महत्वशाली, व्यापक और संपन्न स्वरूप है। इसके माध्यम से भारत की उत्कृष्टतम मनीषा, प्रतिभा, अमूल्य चिंतन, मनन, विवेक, रचनात्मक, सर्जना और वैचारिक प्रज्ञा का अभिव्यंजन हुआ है। आज भी सभी क्षेत्रों में इस भाषा के द्वारा ग्रंथनिर्माण की क्षीण धारा अविच्छिन्न रूप से वह रही है। आज भी यह भाषा, अत्यंत सीमित क्षेत्र में ही सही, बोली जाती है। इसमें व्याख्यान होते हैं और भारत के विभिन्न प्रादेशिक भाषाभाषी पंडितजन इसका परस्पर वार्तालाप में प्रयोग करते हैं। हिंदुओं के सांस्कारिक कार्यों में आज भी यह प्रयुक्त होती है। इसी कारण ग्रीक और लैटिन आदि प्राचीन मृत भाषाओं (डेड लैंग्वेजेज़) से संस्कृत की स्थिति भिन्न है। यह मृतभाषा नहीं, अमरभाषा है।[26]

ऐतिहासिक भाषाविज्ञान की दृष्टि से संस्कृत भाषा आर्यभाषा परिवार के अंतर्गत रखी गई है। आर्यजाति भारत में बाहर से आई या यहाँ इसका निवास था - इत्यादि विचार अनावश्यक होने से यहाँ नहीं किया जा रहा है। पर आधुनिक भाषाविज्ञान के पंडितों की मान्यता के अनुसार भारत यूरोपीय भाषाभाषियों की जो नाना प्राचीन भाषाएँ, (वैदिक संस्कृत, अवस्ता अर्थात् प्राचीनतम पारसी ग्रीक, प्राचीन गॉथिक तथा प्राचीनतम जर्मन, लैटिन, प्राचीनतम आइरिश तथा नाना वेल्ट बोलियाँ, प्राचीनतम स्लाव एवं बाल्टिक भाषाएँ, अरमीनियन, हित्ती, बुखारी आदि) थी, वे वस्तुत: एक मूलभाषा की (जिसे मूल आर्यभाषा, आद्य आर्यभाषा, इंडोजर्मनिक भाषा, आद्य-भारत-योरोपीय भाषा, फादरलैंग्वेज आदि) देशकालानुसारी विभिन्न शाखाएँ थी। उन सबकी उद्गमभाषा या मूलभाषा का आद्यआर्यभाषा कहते हैं। कुछ विद्वानों के मत में-वीरा-मूलनिवासस्थान के वासी सुसंगठित आर्यों को ही 'वीरोस' (wiros) या वीरास् (वीरा:) कहते थे।

वीरोस् (वीरो) शब्द द्वारा जिन पूर्वोक्त प्राचीन आर्यभाषा समूह भाषियों का द्योतन होता है उन विविध प्राचीन भाषाभाषियों को विरास (संवीरा:) कहा गया है। अर्थात् समस्त भाषाएँ पारिवारिक दृष्टि से आर्यपरिवार की भाषाएँ हैं। संस्कृत का इनमें अन्यतम स्थान है। उक्त परिवार की 'केंतुम्' और 'शतम्' (दोनों ही शतवात्तक शब्द) दो प्रमुख शाखाएँ हैं। प्रथम के अंतर्गत ग्रीक, लातिन आदि आती हैं। संस्कृत का स्थान 'शतम्' के अंतर्गत भारतईरानी शाखा में माना गया है। आर्यपरिवार में कौन प्राचीन, प्राचीनतर और प्राचीनतम है यह पूर्णत: निश्चित नहीं है। फिर भी आधुनिक अधिकांश भाषाविद् ग्रीक, लातिन आदि को आद्य आर्यभाषा की ज्येष्ठ संतति और संस्कृत को उनकी छोटी बहिन मानते हैं। इतना ही नहीं भारत-ईरानी-शाखा की प्राचीनतम अवस्ता को भी संस्कृत से प्राचीन मानते हैं। परंतु अनेक भारतीय विद्वान् समझते हैं कि 'जिद-अवस्ता' की अवस्ता का स्वरूप ऋक्भाषा की अपेक्षा नव्य है। जो भी हो, इतना निश्चित है कि ग्रंथरूप में स्मृतिरूप से अवशिष्ट वाङ्मय में ऋक्संहिता प्राचीनतम है और इसी कारण वह भाषा भी अपनी उपलब्धि में प्राचीनतम है। उसकी वैदिक संहिताओं की बड़ी विशेषता यह है कि हजारों वर्षों तक जब लिपि कला का भी प्रादुर्भाव नहीं था, वैदिक संहिताएँ मौखिक और श्रुतिपरंपरा द्वारा गुरुशिष्यों के समाज में अखंड रूप से प्रवहमान थीं। उच्चारण की शुद्धता को इतना सुरक्षित रखा गया कि ध्वनि ओर मात्राएँ, ही नहीं, सहस्रों वर्षों पूर्व से आज तक वैदिक मंत्रों में कहीं पाटभेद नहीं हुआ। उदात्त अनुदात्तादि स्वरों का उच्चारण शुद्ध रूप में

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 3, May 2023 |

पूर्णत: अविकृत रहा। आधुनिक भाषावैज्ञानिक यह मानते हैं कि स्वरों की दृष्टि से ग्रीक, लातिन आदि के 'केंतुम्' वर्ग की भाषाएँ अधिक संपन्न भी हैं और मूल या आद्य आर्यभाषा के अधिक समीप भी। उनमें उक्त भाषा की स्वरसंपत्ति अधिक सुरक्षित हैं। संस्कृत में व्यंजनसंपत्ति अधिक सुरक्षित है। भाषा के संघटनात्मक अथवा रूपात्मक विचार की दृष्टि से संस्कृत भाषा को विभक्तिप्रधान अथवा 'श्लिष्टभाषा' (एग्लुटिनेटिव लैंग्वेज) कहा जाता है।[27]

प्रामाणिकता के विचार से इस भाषा का सर्वप्राचीन उपलब्ध व्याकरण पाणिनि की अष्टाव्यापी है। कम से कम 600 ई. पू. का यह ग्रंथ आज भी समस्त विश्व में अतुलनीय व्याकरण है। विश्व के और मुख्यत: अमरीका के भाषाशास्त्री संघटनात्मक भाषा विज्ञान की दृष्टि से अष्टाध्यायी को आज भी विश्व का सर्वोत्तम ग्रंथ मानते हैं। 'ब्लूमफील्ड' ने अपने 'लैंग्वेज' तथा अन्य कृतियों में इस तथ्य की पुष्ट स्थापना की है। पाणिनि के पूर्व संस्कृत भाषा निश्चय ही शिष्ट एवं वैदिक जनों की व्यवहारभाषा थी। असंस्कृत जनों में भी बहुत सी बोलियाँ उस समय प्रचलित रही होंगी। पर यह मत आधुनिक भाषाविज्ञों को मान्य नहीं है। वे कहते हैं कि संस्कृत कभी भी व्यवहारभाषा नहीं थी। जनता की भाषाओं को तत्कालीन प्राकृत कहा जा सकता है। देवभाषा तत्वत: कृत्रिम या संस्कार द्वारा निर्मित ब्राह्मणपंडितों की भाषा थी, लोकभाषा नहीं। परंतु यह मत सर्वमान्य नहीं है। पाणिनि से लेकर पतंजलि तक सभी ने संस्कृत का लोक की भाषा कहा है, लौकिक भाषा बताया है। अन्य सैकड़ों प्रमाण सिद्ध करते हैं कि 'संस्कृत' वैदिक और वैदिकोत्तर पूर्वपाणिनिकाल में लोकभाषा और व्यवहारभाषा (स्पीकेन लैग्वेज) थी। यह अवश्य रहा होगा कि देश, काल और समाज के संदर्भ में उसकी अपनी सीमा रही होगी। बाद में चलकर वह पठित समाज की साहित्यिक, और सांस्कृतिक भाषा बन गई। तदनंतर यह समस्त भारत में सभी पंडितों की, चाहे वे आर्य रहें हों या आर्येतर जाति के - सभी की, सर्वमान्य सांस्कृतिक भाषा हो गई और आसेतुहिमाचल इसका प्रसार, समादर और प्रचार रहा एवं आज भी बना हुआ है। लगभग सत्रहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध से योरप और पश्चिमी देशों के मिशनरी एवं अन्य विद्याप्रेमियों को संस्कृत का परिचय प्राप्त हुआ। धीरे-धीरे पश्चिम में ही नहीं, समस्त विश्व में संस्कृत का प्रचार हुआ। जर्मन, अंग्रेज, फ्रांसीसी, अमरीकी तथा योरप के अनेक छोटे बड़े देश के निवासी विद्वानों ने विशेष रूप से संस्कृत के अध्ययन अनुशीलन को आधुनिक विद्वानों में प्रजाप्रिय बनाया। आधुनिक विद्वानों और अनुशीलकों के मत से विश्व की पुराभाषाओं में संस्कृत सर्वाधिक व्यवस्थित, वैज्ञानिक और संपन्न भाषा है। वह आज केवल भारतीय भाषा ही नहीं, एक रूप से विश्वभाषा भी है। यह कहा जा सकता है कि भूमंडल के प्रयत्न-भाषा-साहित्यों में कदाचित् संस्कृत का वाङ्मय सर्वाधिक विशाल, व्यापक, चतुर्मुखी और संपन्न है। संसार के प्राय: सभी विकसित और संसार के प्राय: सभी विकासमान देशों में संस्कृत भाषा और साहित्य का आज अध्ययन-अध्यापन हो रहा है।[28]

बताया जा चुका है कि इस भाषा का परिचय होने से ही आर्य जाति, उसकी संस्कृति, जीवन और तथाकथित मूल आद्य आर्यभाषा से संबद्ध विषयों के अध्ययन का पश्चिमी विद्वानों को ठोस आधार प्राप्त हुआ। प्राचीन ग्रीक, लातिन, अवस्ता और ऋक्संस्कृत आदि के आधार पर मूल आद्य आर्यभाषा की ध्वि, व्याकरण और स्वरूप की परिकल्पना की जा सकी जिसें ऋक्संस्कृत का अवदान सबसे अधिक महत्व का है। ग्रीक, लातिन प्रत्नगाथिक आदि भाषाओं के साथ संस्कृत का पारिवारिक और निकट संबंध है। पर भारत-इरानी-वर्ग की भाषाओं के साथ (जिनमें अवस्ता, पहलवी, फारसी, ईरानी, पश्तो आदि बहुत सी प्राचीन नवीन भाषाएँ हैं) संस्कृत की सर्वाधिक निकटता है। भारत की सभी आद्य, मध्यकालीन एवं आधुनिक आर्यभाषाओं के विकास में मूलत: ऋग्वेद-एवं तदुत्तरकालीन संस्कृत का आधारिक एवं औपादानिक योगदान रहा है। आधुनिक भाषावैज्ञानिक मानते हैं कि ऋग्वेदकाल से ही जनसामान्य में बोलचाल की तथाभूत प्राकृत भाषाएँ अवश्य प्रचलित रही होंगी। उन्हीं से पालि, प्राकृत अपभ्रंश तथा तदुत्तरकालीन आर्यभाषाओं का विकास हुआ। परंतु इस विकास में संस्कृत भाषा का सर्वाधिक और सर्वविध योगदान रहा है। यहीं पर यह भी याद रखना चाहिए कि संस्कृत भाषा ने भारत के विभिन्न प्रदेशों, और अंचलों की आर्येतर भाषाओं को भी काफी प्रभावित किया तथा स्वयं उनसे प्रभावित हुई; उन भाषाओं और उनके भाषणकर्ताओं की संस्कृति और साहित्य को तो प्रभावित किया ही, उनकी भाषाओं शब्दकोश उनक ध्वनिमाला और लिपिकला को भी अपने योगदान से लाभान्वित किया। भारत की दो प्राचीन लिपियाँ-(1) ब्राह्मी (बाएँ से लिखी जानेवाली) और (2) खरोष्ट्री (दाएँ से लेख्य) थीं। इनमें ब्राह्मी को संस्कृत ने मुख्यत: अपनाया।[29]

भाषा की दृष्टि से संस्कृत की ध्वनिमाला पर्याप्त संपन्न है। स्वरों की दृष्टि से यद्यपि ग्रीक, लातिन आदि का विशिष्ट स्थान है, तथापि अपने क्षेत्र के विचार से संस्कृत की स्वरमाला पर्याप्त और भाषानुरूप है। व्यंजनमाला अत्यंत संपन्न है। सहस्रों वर्षों तक भारतीय आर्यों के आद्यषुतिसाहित्य का अध्यनाध्यापन गुरु शिष्यों द्वारा मौखिक परंपरा के रूप में प्रवर्तमान रहा क्योंकि कदाचित् उस युग में (जैसा आधुनिक इतिहासज्ञ लिपिशास्त्री मानते हैं), लिपिकला का उद्भव और विकास नहीं हो पाया था। संभवत: पाणिनि के कुछ पूर्व या कुछ बाद से लिपि का भारत में प्रयोग चल पड़ा और मुख्यत: 'ब्राह्मी' को संस्कृत भाषा का वाहन बनाया गया। इसी ब्राह्मी ने आर्य और आर्यतर अधिकांश लिपियों की वर्णमला और वर्णक्रम को भी प्रभावित किया। यदि मध्यकालीन नाना भारतीय द्रविड़ भाषाओं तथा तमिल, तेलगु आदि की वर्णमाला पर भी संस्कत भाषा और ब्राह्मी लिपि का पर्याप्त प्रभाव है। ध्वनिमाला और ध्वनिक्रम की दृष्टि से पाणिनिकाल से प्रचलित संस्कृत वर्णमाला आज भी कदाचित् विश्व की सर्वाधिक वैज्ञानिक एवं शास्त्रीय वर्णमाला है। संस्कृत भाषा के साथ-साथ समस्त विश्व में प्रत्यक्ष या रोमन अकारांतक के रूप में आज समस्त संसार में इसका प्रचार हो गया है।[30]

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 3, May 2023 |

संस्कृत साहित्य - यहाँ साहित्य शब्द का प्रयोग 'वाङ्मय' के लिए है। ऊपर वेद संहिताओं का उल्लेख हुआ है। वेद चार हैं- ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद। इनकी अनेक शाखाएँ थीं जिनमें बहुत सी लुप्त हो चुकी हैं और कुछ सुरक्षित बच गई हैं जिनके संहिताग्रंथ हमें आज उपलब्ध हैं। इन्हीं की शाखाओं से संबद्ध ब्राह्मण, अरण्यक और उपनिषद् नामक ग्रंथों का विशाल वाङ्मय प्राप्त है। वेदांगों में सर्वप्रमुख कल्पसूत्र हैं जिनके अवांतर वर्गों के रूप में और सूत्र, गृह्यसूत्र और धर्मसूत्र (शुल्बसूत्र भी है) का भी व्यापक साहित्य बचा हुआ है। इन्हीं की व्याख्या के रूप में समयानुसार धर्मसंहिताओं और स्मृतिग्रंथों का जो प्रचुर वाङ्मय बना, मनुस्मृति का उनमें प्रमुख स्थान है। वेदांगों में शिक्षा-प्रातिशाख्य, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष, छंद शास्त्र से संबद्ध ग्रंथों का वैदिकोत्तर काल से निर्माण होता रहा है। अब तक इन सबका विशाल साहित्य उपलब्ध है। आज ज्योतिष की तीन शाखाएँ-गणित, सिद्धांत और फलित विकसित हो चुकी हैं और भारतीय गणितज्ञों की विश्व की बहुत सी मौलिक देन हैं। पाणिनि और उनसे पूर्वकालीन तथा परवर्ती वैयाकरणों द्वारा जाने कितने व्याकरणों की रचना हुई जिनमें पाणिनि का व्याकरण-संप्रदाय 2500 वर्षों से प्रतिष्ठित माना गया और आज विश्व भर में उसकी महिमा मान्य हो चुकी है। यास्क का निरुक्त पाणिनि से पूर्वकाल का ग्रंथ है और उससे भी पहले निरुक्तिविद्या के अनेक आचार्य प्रसिद्ध हो चुके थे। शिक्षाप्रातिशाख्य ग्रंथों में कदाचित् ध्वनिविज्ञान, शास्त्र आदि का जितना प्राचीन और वैज्ञानिक विवेचन भारत की संस्कृत भाषा में हुआ है- वह अतुलनीय और आश्चर्यकारी है। उपवेद के रूप में चिकित्साविज्ञान के रूप में आयुर्वेद विद्या का वैदिकाल से ही प्रचार था और उसके पंडिताग्रंथ (चरकसंहिता, सुश्रुतसंहिता, भेडसंहिता आदि) प्राचीन भारतीय मनीषा के वैज्ञानिक अध्ययन की विस्मयकारी निधि है। इस विद्या के भी विशाल वाङ्मय का कालांतर में निर्माण हुआ। इसी प्रकार धनुर्वेद और राजनीति, गांधर्ववेद आदि को उपवेद कहा गया है तथा इनके विषय को लेकर ग्रंथ के रूप में अथवा प्रसंगतिर्गत संदर्भों में पर्याप्त विचार मिलता है।[31]

वेद, वेदांग, उपवेद आदि के अतिरिक्त संस्कृत वाङ्मय में दर्शनशास्त्र का वाङ्मय भी अत्यंत विशाल है। पूर्वमीमांसा, उत्तर मीमांसा, सांख्य, योग, वैशेषिक और न्याय-इन छह प्रमुख आस्तिक दर्शनों के अतिरिक्त पचासों से अधिक आस्तिक-नास्तिक दर्शनों के नाम तथा उनके वाङ्मय उपलब्ध हैं जिनमें आत्मा, परमात्मा, जीवन, जगत्पदार्थमीमांसा, तत्वमीमांसा आदि के संदर्भ में अत्यंत प्रौढ़ विचार हुआ है। आस्तिक षड्दर्शनों के प्रवर्तक आचार्यों के रूप में व्यास, जैमिनि, कपिल, पतंजि, कणाद, गौतम आदि के नाम संस्कृत साहित्य में अमर हैं। अन्य आस्तिक दर्शनों में शैव, वैष्णव, तांत्रिक आदि सैकड़ों दर्शन आते हैं। आस्तिकेतर दर्शनों में बौद्धदर्शनों, जैनदर्शनों आदि के संस्कृत ग्रंथ बड़े ही प्रौढ़ और मौलिक हैं। इनमें गंभीर विवेचन हुआ है तथा उनकी विपुल ग्रंथराशि आज भी उपलब्ध है। चार्वाक, लोकायतिक, गार्हपत्य आदि नास्तिक दर्शनों का उल्लेख भी मिलता है। वेदप्रामण्य को माननेवाले आस्तिक और तदितर नास्तिक के आचार्यों और मनीषियों ने अत्यंत प्रचुर मात्रा में दार्शनिक वाङ्मय का निर्माण किया है। दर्शन सूत्र के टीकाकार के रूप में परमादृत शंकराचार्य का नाम संस्कृत साहित्य में अमर है।

कौटिल्य का अर्थशास्त्र, वात्स्यायन का कामसूत्र, भरत का नाट्य शास्त्र आदि संस्कृत के कुछ ऐसे अमूल्य ग्रंथरत्न हैं-जिनका समस्त संसार के प्राचीन वाङ्मय में स्थान है। श्रीमद्भगवद्गीता का संसार में कहा जाता है-बाईबिल के बाद सर्वाधिक प्रचार है तथा विश्व की उत्कृष्टतम कृतियों में उसका उच्च और अन्यतम स्थान है।[32]

वैदिक वाङ्मय के अनंतर सांस्कृति दृष्टि से वाल्मीकि के रामायण और व्यास के महाभारत की भारत में सर्वोच्च प्रतिष्ठा मानी गई है। महाभारत का आज उपलब्ध स्वरूप एक लाख पद्यों का है। प्राचीन भारत की पौराणिक गाथाओं, समाजशास्त्रीय मान्यताओं, दार्शनिक आध्यात्मिक दृष्टियों, मिथकों, भारतीय ऐतिहासिक जीवनचित्रों आदि के साथ-साथ पौराणिक इतिहास, भूगोल और परंपरा का महाभारत महाकोश है। वाल्मीकि रामायण आद्य लौकिक महाकाव्य है। उसकी गणना आज भी विश्व के उच्चतम काव्यों में की जाती है। इनके अतिरिक्त अष्टादश पुराणों और उपपुराणादिकों का महाविशाल वाङ्मय है जिनमें पौराणिक या मिथकीय पद्धति से केवल आर्यों का ही नहीं, भारत की समस्त जनता और जातियों का सांस्कृति इतिहास अनुबद्ध है। इन पुराणकार मनीषियों ने भारत और भारत के बाहर से आयात सांस्कृति एवं आध्यात्मिक ऐक्य की प्रतिष्ठा का सहस्राब्दियों तक सफल प्रयास करते हुए भारतीय सांस्कृति को एकसूत्रता में आबद्ध किया है।

संस्कृत के लोकसाहित्य के आदिकवि वाल्मीकि के बाद गद्य पद्य के लाखों श्रव्यकाव्यों और दृश्यकाव्यरूप नाटकों की रचना होती चली जिनमें अधिकांश लुप्त या नष्ट हो गए। पर जो स्वल्पांश आज उपलब्ध है, सारा विश्व उसका महत्व स्वीकार करता है। कवि कालिदास के अभिज्ञानशाकुतलम् नाटक को विश्व के सर्वश्रेष्ठ नाटकों में स्थान प्राप्त है। अश्वघोष, भास, भवभूति, बाणभट्ट, भारवि, माघ, श्रीहर्ष, शूद्रक, विशाखदत्त आदि कवि और नाटककारों को अपने अपने क्षेत्रों में अत्यंत उच्च स्थान प्राप्त है। सर्जनात्मक नाटकों के विचार से भी भारत का नाटक साहित्य अत्यंत संपन्न और महत्वशाली है। साहित्यशास्त्रीय समालोचन पद्धति के विचार से नाट्यशास्त्र और साहित्यशास्त्र के अत्यंत प्रौढ़, विवेचनपूर्ण और मौलिक प्रचुरसख्यक कृतियों का संस्कृत में निर्माण हुआ है। सिद्धांत की दृष्टि से रसवाद और ध्वनिवाद के विचारों को मौलिक और अत्यंत व्यापक चिंतन माना जाता है। स्तोत्र, नीति और सुभाषित के भी अनेक उच्च कोटि के ग्रंथ हैं। इनके अतिरिक्त शिल्प, कला, संगीत, नृत्य आदि उन सभी विषयों के प्रौढ़ ग्रंथ संस्कृत भाषा के माध्यम से निर्मित हुए हैं जिनका किसी भी प्रकार से आदिमध्यकालीन भारतीय जीवन में किसी पक्ष के साथ संबंध रहा है। ऐसा समझा जाता है कि द्यूतविद्या, चौरविद्या

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 3, May 2023 |

आदि जैसे विषयों पर ग्रंथ बनाना भी संस्कृत पंडितों ने नहीं छोड़ा था। एक बात और थी। भारतीय लोकजीवन में संस्कृत की ऐसी शास्त्रीय प्रतिष्ठा रही है कि ग्रंथों की मान्यता के लिए संस्कृत में रचना को आवश्यक माना जाता था। इसी कारण बौद्धों और जैनों, के दर्शन, धर्मसिद्धांत, पुराणगाथा आदि नाना पक्षों के हजारों ग्रंथों को पाली या प्राकृत में ही नहीं संस्कृत में सप्रास रचना हुई है। संस्कृत विद्या की न जाने कितनी महत्वपूर्ण शाखाओं का यहाँ उल्लख भी अल्पस्थानता के कारण नहीं किया जा सकता है। परंतु निष्कर्ष रूप से पूर्ण विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि भारत की प्राचीन संस्कृत भाषा-अत्यंत समर्थ, संपन्न और ऐतिहासिक महत्व की भाषा है। इस प्राचीन वाणी का वाङ्मय भी अत्यंत व्यापक, सर्वतोमुखी, मानवतावादी तथा परमसंपन्न रहा है। विश्व की भाषा और साहित्य में संस्कृत भाषा और साहित्य का स्थान अत्यंत महत्वशाली है। समस्त विश्व के प्रच्यविद्याप्रेमियों ने संस्कृत को जो प्रतिष्ठा और उच्चासन दिया है, उसके लिए भारत के संस्कृतप्रेमी सदा कृतज्ञ बने रहेंगे।[30]

परिणाम

म्यग् कृतं परिष्कृतं इति संस्कृतम्"

सम् उपसर्ग पूर्वक कृ धातु से क्त प्रत्यय लगकर निष्पन्न संस्कृत[(1)] शब्द का अर्थ है-परिष्कृत सुरचित, पुनीत शालीन और सभ्य, जो अभिव्यक्ति की पूर्णता की ओर संकेत करता है।[(2)] यद्यपि एशिया में अब संस्कृत बोली नहीं जाती तथापि यह दक्षिण और दक्षिण-पूर्व एशियाई सभ्यताओं का ठोस आधार बनी हुई है। विशेष बात तो यह है कि जो लोग इस भाषा को नहीं भी बोलते हैं वे भी इसकी संरचना एवं सिद्धान्तों को अपनी संस्कृति में अनुभव कर सकते हैं। संस्कृत भाषा संस्कृति, मानव-विज्ञान, साहित्य, संगीत[(3)] कला[(4)] नाट्य[(5)] तीर्थाटन व धार्मिक आख्यानों व अनुष्ठानों की शिक्षा का भण्डार है।[(6)] संस्कृत "विज्ञान एवं तकनीक की सभी शाखाओं" जैसे-चिकित्सा, मानव विज्ञान, वनस्पतिशास्त्र, गणित, अभियान्त्रिकी, वास्तु तथा आहार-विहार आदि को समाविष्ट करती है[(7)] पाणिनीय व्याकरण संस्कृत की विलक्षण उपलब्धि है। संस्कृत आधुनिक संगणक विज्ञान के प्रवर्तकों के लिए सुझावों का स्रोत बनी हुई है।

संस्कृत की महत्ता प्राचीनता के साथ-साथ उसकी गहन रचनात्मक क्षमता में है। पाश्चात्य विद्वान् प्रायः यह मान लेते हैं कि संस्कृत भाषा में सन्निहित ज्ञान का अन्य भाषाओं में अनुवाद करके उसे वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में ढाला जा सकता है, परन्तु ऐसा नहीं है। प्रत्येक संस्कृति का सामूहिक संचयी अनुभव उसके विशिष्ट भूगोल एवं इतिहास के अनुसार होता है। विभिन्न संस्कृतियों के विशिष्ट अनुभवों में परस्पर विनिमय सम्भव नहीं क्योंकि इन अनुभवों को व्यक्त करनेवाले शब्दों का उनके मूल रूप में रहना आवश्यक है, यदि भाषा सम्बन्धी श्रेणियाँ समय के साथ लुप्त हो जाती हैं तो सांस्कृतिक अनुभव की विविधताएँ भी नष्ट हो जाती हैं। बहुत सी प्राचीन सांस्कृतिक कलाकृतियाँ दूसरी संस्कृतियों में समान नहीं है और बलात् पश्चिमी साँचे में ढाला जाना, उन्हें हड़पने व विकृत करने जैसा है।

संस्कृत में कुछ विशेष गुण हैं जो धार्मिक दर्शनशास्त्र की विशिष्ट प्रकृति एवं अन्तर्निहित स्वाभाविक प्रसंग को प्रकट करते हैं। संस्कृत मूलभूत ध्वनियों में संयोगों और अन्तर्सम्बन्धों की परते हैं, जो परस्पर आधारभूत कम्पनों के द्वारा परस्पर जुड़ी हुई हैं। अतः बीजगणितीय सूत्र की तरह एक शब्द का पूरा अर्थ उसकी ध्वनियों का समग्र स्वरूप होता है। इसीलिए जब कोई विदेशी संस्कृति अपना सरलीकृत अनुवाद संस्कृत शब्दों पर थोपती है तब हानि ही होती है। यह[(8)] एक क्रमिक और सूक्ष्म प्रक्रिया है जिसे पुरस्कार, सम्मान और बेहतर जीवन शैली का लालच देकर प्राप्त किया जाता है। संस्कृत अद्वितीय और अरूपान्तरणीय क्यों है? इसमें निहित सभ्यताएँ दूसरों से अलग क्यों हैं? क्योंकि संस्कृत भाषा के अक्षरों का गठन इस ब्रह्माण्डीय स्पन्दन की गूँज से हुआ है जो मनमाने ढंग से अर्थों का सम्बन्ध ध्वनियों से नहीं जोड़ता। संस्कृत-शास्त्रों को बौद्धिक ज्ञान से समझा जा सकता है, परन्तु कुछ शास्त्र अनुभवात्मक अर्थ के साथ कम्पनों के अनुक्रम हैं और वे केवल योगाभ्यास द्वारा ही जाने जा सकते हैं। संस्कृत ब्रह्माण्ड की अभिन्न एकता को कैसे प्रदर्शित करती है? उत्तर यह है कि अभिन्न एकता को समाविष्ट किए बना हम जिस विविधता का अनुभव करते हैं वही वास्तविकता है। अतः संस्कृत शब्दों का अन्य भाषाओं में अनुवाद नहीं किया जा सकता है। यह संस्कृत की एक अद्भुत विशेषता है।

अनेक भारतीय परम्पराओं ने संस्कृत की प्राचीन गुणवत्ता को ग्रहण करने का प्रयास किया है। कुछ ऋषियों ने अपने अनुभवों को "शक्ति" अथवा "प्राचीन-ऊर्जा" की "प्राणिक अभिव्यक्ति" के रूप में प्रदर्शित किया है तो कुछ ने इस ब्रह्माण्ड की व्याख्या कम्पनशील सत्य के रूप में करने का प्रयास किया। "स्फोट" सिद्धान्त के अनुसार[(9)]- "ध्वनि" और "अर्थ" वास्तविकता में एक ही सिक्के के दो पहलू हैं और अपने अप्रकट रूप में एक जैसे है।

वाक् के चार स्तर हैं- अव्यक्त, सूक्ष्म, वैचारिक संकल्पना तथा स्थूल वाणी कहते हैं।

"वाक् देवी" मूल ध्वनियों से सभी विचारों, तालों, कम्पनों और प्रत्यक्ष वस्तुओं को हमारे समक्ष लाती है वह ब्रह्माण्डों तथा उस पदार्थ की जन्मदात्री है जिससे ब्रह्माण्ड की रचना होती है।

शब्दब्रह्म ब्रह्माण्ड की प्राचीनतम ध्वनिचेतना है। तान्त्रिक परम्पराओं में प्रत्येक वस्तु की एक अन्तर्निर्मित ध्वन्यात्मक ध्वनि होती है किसी वस्तु के दस से अधिक नाम भी हो सकते हैं परन्तु केन्द्रीय बिन्दु अथवा बीजमन्त्र तथा भावार्थ कभी नहीं बदलता। "हिन्दू

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 3, May 2023 |

मनुष्य स्वयं को एक ऐसे जीव के रूप में देखता है जो इस विराट ब्रह्माण्ड अथवा प्रकृति का सच्चा प्रतिरूप है। वह प्रकृति के विषय में ज्ञान अपनी तात्कालिक संवेदनशील जागरूता को योग द्वारा परिष्कृत करके प्राप्त करता है।[10] महर्षि पतंजलि[11] ने "ऋतम्भराबुद्धि[12] का वर्णन किया है। संस्कृत "योग" की भाषा है। योग के अनुभवों को संस्कृत के अतिरिक्त किसी और भाषा में सही प्रकार से प्रस्तुत करना कठिन है क्योंकि केवल संस्कृत में ही वे अनुभव क्रमबद्ध किए गये हैं।[13] संस्कृत वर्णमाला में जो "एकाक्षरी ध्वनियाँ" हैं वे इस सृष्टि की उत्पत्ति का मूलाधार है। संस्कृत में ध्वनि-कम्पन "परम सत्य" हैं जिन्हें "नाद-ब्रह्म" कहा गया है, जहाँ से सृष्टि की उत्पत्ति होती है। केवल संस्कृत में ही प्रत्येक शब्द को उसकी मूल-ध्वनि में विश्लेषित किया जा सकता है जो उसके मूल और अर्थ को समाविष्ट करता है और जहाँ से वह उत्पन्न हुआ जाना जा सकता है।[21]

शब्द को प्रायः अंग्रेज़ी में "वर्ड" (Word) के रूप में अनुवादित किया जाता है जबकि कई ध्वनिग्राम संयुक्त अनुक्रम में मिलकर एक "शब्द"[14] बनाते हैं। संस्कृत में अलग-अलग अक्षरों अथवा ध्वनिग्राम का अर्थ जानने के लिए एक शब्दकोश है।[15] अंग्रेज़ी में प्राथमिक ध्वनिग्राम या अक्षरों के मूल स्वर का समृद्ध अर्थ है तथा प्रत्येक का चेतना पर विशेष प्रभाव है इसीलिए "शब्द ब्रह्म" कहा जाता है तथा शब्द की शक्ति मुक्ति प्रदान करने जैसी है।[16]

"सृष्टि के आरम्भ में एक मौलिक ध्वनि थी जो विविध मूल ध्वनियों के रूप में पहचानी गई और आगे अभिव्यक्त होकर मिश्रित ध्वनियों के अनुक्रम के फलस्वरूप शब्दों के रूप में प्रकट हुई।" अर्थात् शब्द के प्रकट होने से पहले बहुत कुछ घटित हुआ जबकि कहा गया है कि-"सृष्टि के आरम्भ में शब्द था"।[17]

इसके प्रत्येक स्वर एवं व्यंजन का एक विशिष्ट एवं अपरिहार्य बल है जो वस्तुओं की प्रकृति पर आधारित है न कि विकास या मानवी चयन पर। ये मूलभूत ध्वनियाँ है जो तान्त्रिक बीज-मन्त्रों की जड़ों में स्थित हैं और मन्त्रों की प्रभावकारी शक्ति का स्वयं गठन करती है। मूल-भाषा के प्रत्येक स्वर-व्यंजन का एक प्रारम्भिक अर्थ था जो किसी आवश्यक शक्ति से उत्पन्न हुआ तथा ये अर्थ ही अन्य कई व्युत्पन्न अर्थों का भी आधार बने।"[18]

निष्कर्ष

संस्कृत एक सतत् रचनात्मक भाषा है जिसमें प्रत्येक शब्द विचारों का स्रष्टा और रचनाकार है। अक्षर का शाब्दिक अर्थ है "अविनाशी" अथवा "अनन्त"। "अक्षर" एक ऐसी शाश्वत् ध्वनि है जो कभी नष्ट नहीं होती अपितु भाषा के पूर्ण रहस्य को व्यक्त करती हैं। संस्कृत में "अक्षर"[19] को "वर्ण"[20] भी कहा जाता है जिसका अर्थ है "रंग" अर्थात् अभिव्यक्त होने पर उसका एक स्पष्ट रंग है। इस प्रकार प्रत्येक अक्षर को एक ध्वनि के रूप में सुना जाता है। इसीलिए कहा जाता है ऋषियों ने वेद-मन्त्रों का दर्शन किया, (साक्षात्कार किया)। इस प्रकार वर्णमाला के वर्ण वे गुण या रंग है जिनसे चित्रकार वास्तविकता को चित्रित करता है। मूल ध्वनियाँ एक दूसरे से जुड़कर शब्दों को जन्म देती है जिनके अपने विशिष्ट अर्थ हो सकते हैं। इसलिए यह भी देखा जाता है मूल ध्वनि या शब्द कई अर्थों के लिए भी हो सकता है यहाँ तक कि विपरीत अर्थों को लिए हुए भी।[21]

संस्कृत की संरचना इस चिन्तन पर आधारित है कि इसमें कर्ता की अपेक्षा क्रिया पद्धति पर बल दिया जाता है तथा उस कार्य के लिए किसी को श्रेय की अपेक्षा नहीं रहती। क्योंकि संस्कृत में "कर्मवाच्य-अभिव्यक्ति" अपने आप में प्राकृतिक एवं मान्य पद्धति है। संस्कृत व्याकरण दोनों प्रकार की चरम सीमाओं से बचती है तथा कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग भाषा के रूप में कार्य करती है और स्थापित नियमों एवं व्याकरण के सहारे अनेक प्रकार की योजनाओं को जन्म देती है।

उल्लेखनीय है कि बीसवीं सदी तक पश्चिम के प्रमुख विश्वविद्यालयों में भाषा-विज्ञान में शोध करने वाले शोधार्थियों के लिए पाठ्यक्रम में संस्कृत का होना आवश्यक माना जाता था। एक लम्बे समय तक शिक्षण संस्थानों में संस्कृत का तीव्रता से अध्ययन करने के बाद भाषा-विज्ञान को यूरोपीय स्वरूप देकर संस्कृत से अलग कर दिया गया।

"संस्कृत की शक्ति" और "भारतीय धार्मिक परम्परा के साथ संस्कृत के सम्बन्धों" को अमरिकी कवि[22] सहित कुछ पश्चिमी विचारकों ने समझा उन्होंने जिस यूनीवर्सिटी[23] में संस्कृत का अध्ययन किया वहाँ पर संस्कृतभाषा, "दर्शनशास्त्र" के पाठ्यक्रम का अनिवार्य भाग थी। उन्होंने अपनी अन्तर्दृष्टि एक प्रमुख कविता[24] में व्यक्त की जिसमें उन्होंने "दा" ध्वनिग्राम के विविध अर्थों का अन्वेषण किया तथा अपनी कविता का अन्त "शान्तिः शान्तिः शान्तिः" के द्वारा किया यद्यपि वे अपने सांस्कृतिक पालन पोषण एवं मानसिकता के कारण हिन्दू व बौद्ध धर्म को नहीं अपना सके, उन्हें पता था कि संस्कृत शब्दों का अंग्रेज़ी में उपयुक्त अनुवाद नहीं किया जा सकता इलियट समझ चुके थे कि किसी मन्त्र का प्रभाव केवल उसके अर्थ पर ही निर्भर नहीं करता बल्कि उसके सटीक उच्चारण पर भी निर्भर करता है।[28]

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 3, May 2023 |

संस्कृत को भारत के कुछ मुस्लिम शासकों ने भी संरक्षण प्रदान किया था उन्होंने अपने पुरालेख पत्र संस्कृत भाषा में लिखवाए थे। यह संस्कृत का वैज्ञानिक और धर्म निरपेक्ष पक्ष ही था। महाकवि कालिदास के समय तक संस्कृत, विद्वज्जनों की चहेती बन चुकी थी और वह उनके विचारों एवं कलाकृतियों में परिलक्षित होती थी। संस्कृत की विशिष्ट संरचना तथा लचीलेपन के कारण स्थानीय संस्कृति और भाषा उसमें आत्मसात् हो जाती है। विद्वानों के द्वारा स्थानीय भाषाओं और संस्कृत के पारस्परिक प्रभाव को समझा गया। अतः एशिया की विविध भाषाओं द्वारा संस्कृत एक मूल-भाषा और श्रेणियों की रूपरेखा की तरह उपयोग में लाई गई। ध्यातव्य है कि आत्मसात् करना तथा हड़पना दोनों अलग बाते हैं। हड़पना आत्मसात् करना कभी नहीं हो सकता।

उल्लेखनीय है कि जब एक बार स्थानीय या क्षेत्रीय सांस्कृतिक लक्षणों को संस्कृति में अभिलिखित कर मन्त्रवत् ढाल दिया जाता है तो वे संस्कृति के अभिन्न अंग बन जाते हैं परन्तु जब संस्कृति के तत्वों को स्थानीय क्षेत्रीय पहचान या रंग दे दिया जाता है तब वे एक विशिष्ट पहचान ग्रहण कर लेते हैं।

इण्डोनेशिया के राजा[25] नालन्दा विश्वविद्यालय के इतने बड़े समर्थक थे कि उन्होंने नालन्दा वि.वि. को प्रचुर मात्रा में दान किया।[26] प्रतिभाशाली एशियाई छात्र भारत के प्रमुख शिक्षा केन्द्रों[27] में शिक्षा प्राप्त करने जाते थे। प्रारम्भिक बौद्धग्रन्थ पालि एवं अन्य प्राकृत(28) भाषाओं में थे परन्तु बाद में "मिश्रित संस्कृत" में लिखे गये उस समय मौखिक एवं लिखित संवाद के लिए परिशुद्ध पाणिनीय संस्कृत का चलन था। तिब्बती लिपि और व्याकरण, संस्कृत के आधार पर विकसित की गई वास्तव में वह दर्पण में संस्कृत का ही प्रतिबिम्ब है। थाईलैंड में बहुत पहले[29] से ही संस्कृत का स्पष्ट प्रभाव रहा था वहाँ और दक्षिण पूर्व एशिया के अन्य भागों में संस्कृत को सार्वजनिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं प्रशासनिक प्रयोजनों के लिए उपयोग किया जाता था। आज भी वहाँ संस्कृत को शाही उत्तराधिकारी की मान्यता, वैधता एवं प्रसारण तथा औपचारिक अनुष्ठानों को प्रतिस्थापित करने के माध्यम के रूप में अत्यधिक सम्मान दिया जाता है।

संस्कृत को ग्रहण करने वाली संस्कृतियों ने इसे अपने में समाविष्ट करना अति लाभकारी माना और हिन्दू बौद्ध इतिहास (अतीत के आख्यानों) पुराणों, प्रतीकों, अनुष्ठानों, सिद्धान्तों तथा शासन चलाने के विचारों एवं भारतीय सौन्दर्य शास्त्र को भारत की धरती पर खोजा। इसका प्रमाण यह है कि-एक हज़ार से भी अधिक वर्षों तक चीन, तिब्बत, थाईलैण्ड, म्याँमार, कम्बोडिया, वियतनाम, श्रीलंका एवं अन्य देशों के शासकों ने अपने प्रतिभाशाली छात्रों को भारत के "विहारों[30] में ज्ञान प्राप्त करने के लिए भेजा।

संस्कृत के विषय में एक बात निश्चय ही कहने योग्य है कि संस्कृत शब्दों का अनुवाद नहीं किया जा सकता। यद्यपि संस्कृत के प्राचीन शास्त्रों का संरक्षण और अनुवाद करने के लिए महत्त्वपूर्ण कदम उदार प्रवृत्ति वालों के द्वारा उठाए जा रहे हैं ये प्रयास प्रशंसनीय तो हैं परन्तु आध्यात्मिक साधना और सामाजिक संगठन के संसाधन के रूप में मूल भाषा की शब्दावली और शास्त्रों के महत्त्व को समझने के लिए इन्हें विकल्प नहीं बनाया जा सकता और न ही ये प्रयास आधुनिक विश्वविद्यालयों से संस्कृत को पाठ्यक्रम से हटाने के षडयन्त्र का निवारण कर पाएँगे।

संस्कृत में कुछ और ऐसे विशेष गुण हैं जो धार्मिक दर्शनशास्त्र की विशिष्ट प्रकृति एवं अन्तर्निहित स्वाभाविक प्रसंग को प्रकट करते हैं। प्राचीन शरीस्वैज्ञानिकों ने शरीर की संवेदनशीलता को नैतिक महत्त्व दिया। भारतीय वैयाकरण भाषा-विज्ञान के नियमों को ब्रह्माण्ड के स्वरूप के साथ जोड़कर देखते हैं। संस्कृत आत्मज्ञान की प्राप्ति का लिए एक उत्तम माध्यम है। संस्कृत मूलस्रोत की ओर वापस लौटने का अनुभवात्मक मार्ग प्रदान करती है। जैसे- एक मौलिक कम्पन "क" मूल ध्वनि ख- सूक्ष्म ध्वनि "ग" अन्ततः स्थूल ध्वनि "घ" में बदल जाता है तब संस्कृत के माध्यम से क्रमशः घ (श्रव्य ध्वनि या स्थूल)- ग सूक्ष्म ध्वनि- ख मूल ध्वनि और - मौलिक कम्पन "क" तक वापस पहुँच सकते हैं।[29]

वैज्ञानिक अनुसन्धान इस बात का दावा करते हैं कि बिना अर्थ जाने हुए भी वैदिक संस्कृत शास्त्रों को पढ़ने व उच्चारण करने पर भी एक विशिष्ट शारीरिक अनुभूति व मनः स्थिति उत्पन्न होती है। क्योंकि संस्कृत मन्त्रों को बचपन में ही कण्ठस्थ करवाने का कारण यह है कि उन मन्त्रों के प्रभाव व लाभ का अनुभव समय के साथ-साथ होता रहता है। श्री अरविन्द इसे ही संस्करण कहते हैं जो व्यक्ति के भावी विकास का आधार है। मन्त्र भी बीज की भाँति बोया जाता है और पेड़ के समान विकसित होकर फलता है। "मन्त्र एक ऐसा शब्द है जिसमें देवतत्त्व की शक्ति है तथा वह देवत्व को मानवचेतना एवं उसकी कार्यपद्धति में स्थापित कर सकता है, अनन्त के रोमांच और किसी परमशक्ति को जागृत कर सकता है व परम सत्य के ज्ञान के चमत्कार को स्थाई बना सकता है।"[31]

संस्कृत विद्वानों ने जोन्स के समय से ही पश्चिमी शिक्षा संस्थानों में भाषा-विज्ञान के सृजन में अपना योगदान दिया। यूरोप में संस्कृत के विद्वान् आधुनिक भाषा-विज्ञान को एक शैक्षिक अनुशासन के रूप में स्थापित करने वाले, प्रारम्भिक विकासकर्ता थे।[31]

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 3, May 2023 |

संस्कृत में "समानार्थक शब्दों को क्रमबद्ध करने वाला" एक ग्रन्थ है(32) जिसमें एक-एक शब्द के सत्तर तक पर्यायवाची बतलाए गए हैं। सभी सार्थक हैं सन्दर्भ के अनुसार प्रयुक्त होने योग्य हैं। कवित्वशक्ति एवं प्रतिभा-सम्पन्न साहित्यकार उनका प्रयोग बड़ी कुशलता पूर्वक अपने ग्रन्थ में करता है। इस प्रकार संस्कृत एक सतत् रचनात्मक भाषा है और इसका प्रत्येक शब्द विचारों का सृष्टा और रचनाकार है।[32]

जयतु संस्कृतम्

संदर्भ

1. अमरकोश में संस्कृत शब्द के 8 अर्थ बतलाए गए हैं।
2. वाण्येका समलंकरोति पुरूषं या संस्कृता धार्यते (नीतिशतकम्)
3. "गीतं वाद्यं नृत्यं च त्रयं संगीतमुच्यते"
4. (1)ललित कलाएँ (2) उपयोगी कलाएँ
5. अवस्थानुकृतिर्नाट्यम् (दशरूपक)
6. साहित्यसंगीतकलाविहीनः साक्षात्पशुपुच्छविषाणहीनः (नीतिशतकम्)
7. संस्कृते सर्वं प्रतिष्ठितम्
8. संस्कृत शब्दों का विदेशी भाषा में अनुवाद
9. बुधैर्वैयाकरणैः प्रधानभूत स्फोटरूपव्य°जकस्य शब्दस्य ध्वनिरिति व्यवहारः कृतः।
(काव्यशास्त्र व पाणिनीयदर्शन का एक सिद्धान्त)
10. रिचर्ड लेनॉय
11. पातंजलयोगसूत्र में
12. ऋतम्भरा तत्र प्रज्ञा (पा0यो0सू0)
13. श्री अरविन्द
14. ध्वनिग्राम का समूह ध्वनि और ध्वनियों का समूह शब्द
15. एकाक्षरकोश
16. एकः शब्दः सुप्रयुक्तः सम्यग् ज्ञातः स्वर्गेलोकच कामधुग् भवति
17. बाइबल में
18. श्री अरविन्द
19. न क्षरति इति अक्षर (अविनाशी) "एकाक्षरं परंब्रह्म" मनु0
20. सवर्णम् अक्षरम् (शब्द की मात्रा)
21. विपरीतार्थक या विलोम शब्द
22. टी.एस. इलियट
23. हारवर्ड
24. द वेस्ट लैण्ड
25. राजा बलदेव
26. सन् 860 में
27. तक्षशिला, नालन्दा, वलभी, काशी आदि
28. स्थानीय जनभाषाओं में
29. सन् 1500 ई.
30. शिक्षण संस्थानों
31. श्री अरविन्द
32. अमरकोष

IJARASEM

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

निस्केयर NISCAIR

International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

| Mobile No: +91-9940572462 | Whatsapp: +91-9940572462 | ijarasem@gmail.com |

www.ijarasem.com